बी. भारत कुमार वगैरह

बनाम

ओस्मानिया युनिवर्सिटी व अन्य

9 मई,2007

(जस्टीस एच.के.सेमा और वी.एस. सिरपुरकर)

सेवा कानून :

कॉलेज और युनिवर्सिटीज अध्यापक-सेवानिवृति की आयू-लेक्चरर, प्रोफेसर, रीडर, लाईब्रेरियन, शारीरिक शिक्षा अध्यापक आदि, जो अलग-अलग निजी कॉलेजों में सेवारत थे, जो सरकार द्वारा अनुदान सहायता का आनन्द ले रहे थे-उन सभी द्वारा दायर की गई अलग-अलग रिट याचिकाओं में एक ही प्रकार के अनुतोष की प्रार्थना की गई कि उनकी सेवानिवृति की आयु, जो 58 या 60 वर्ष थी, को 62 वर्ष किया जाना चाहीये-वे वेतनमान के संशोधन हेतु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग यूजीसी की अधिसूचना पर निर्भर थे-राज्य सरकार द्वारा अध्यापकों यूजीसी वेतनमान के कार्यान्वयन हेतु आदेश जारी किया गया और वेतन की सीमा तक उक्त स्कीम को लागू करने में सहमति व्यक्त की गई।-उक्त आदेश में यह कहा गया कि सरकार ने यह फैसला लिया है कि सेवानिवृति की आयु में कोई बदलाव नहीं होना चाहीये और यह कॉलेज शिक्षकों के लिये 58 साल तथा युनिवर्सिटी शिक्षकों के लिए 60 साल ही रहेगी-उच्च न्यायालय ने शिक्षकों द्वारा दायर रिट

याचिकाओं को खारिज कर दिया-निर्णय-यह योजना स्वैच्छिक थी और यह राज्य सरकार पर निर्भर था कि वह इस योजना को स्वीकार करे या न करे-यदि सरकार द्वारा योजना के किसी भाग को स्वीकार करे, यह आवश्यक नहीं था कि सम्पूर्ण योजना को सरकार हुबहु स्वीकार करे-योजना स्वयं राज्य सरकार को यह विवेक देती है कि वह इसे स्वीकार करे या नहीं-यदि राज्य सरकार अपने विवेक से, जो योजना द्वारा ही प्रदत्त था, आय को प्रतिबंधित करने का निर्णय लेता है और 60 या 62 साल तक नहीं बढाता है तो ऐसा करना पूर्णतः न्यायपूर्ण था।

अपीलार्थीगण विभिन्न निजी कॉलेजों में सेवारत थे,जो सरकार द्वारा प्रदत्त की गई अनुदान सहायता का आनन्द ले रहे थे। वे व्याख्यात, प्रोफेसर, रीडर, लाईब्रेरियन, शारीरिक शिक्षा शिक्षक आदि के रूप में सेवारत थे। उन सभी की एक ही प्रार्थना थी कि उनकी सेवानिवृति आयु 58 या 60 वर्ष, जैसा भी मामला हो, से 62 वर्ष बढानी चाहीये। याचिकाकर्ताओ ने यूजीसी के वेतनमान में संशोधन की अधिसूचना पर भरोसा किया।

न्यायालय द्वारा अपीलों को खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया गया :

1. यह योजना स्वैच्छिक थी और यह राज्य सरकारों पर निर्भर था कि वे इस योजना को स्वीकार करे या ना करे। यदि राज्य सरकार द्वारा योजना के एक हिस्से को स्वीकार कर लिया जाता है तो भी राज्य सरकार

के लिए यह आवश्यक नहीं है कि राज्य सरकार सम्पूर्ण योजना को स्वीकार करे। पश्चातवर्ती घटनाक्रम से यह सुझाया गया कि राज्य सरकार ने इस योजना को सम्पूर्ण स्वीकार करने का विकल्प नहीं चुना है क्योंकि राज्य सरकार ने यूजीसी के सेवानिवृति की आयु बढाने के सुझाव को स्वीकार नहीं किया है।

टी.पी जॉर्ज बनाम स्टेट आफ केरला (1992) सुप्रा. 3 एससीसी 191:ओ.पी. सिंगला बनाम युनियन आफ इण्डिया(1984) 4 एससीसी 450; मनिकला मजुमदार बनाम गोरून्गा चन्द्रा डे (2005) 2 एससीसी 400: चन्द्रिका प्रसाद यादव बनाम स्टेट आफ बिहार, (2004) 6. एससीसी 331: डव इन्वेस्टमेंटस (पी) लिमिटेड बनाम गुजरात इन्डस्ट्रीयल इन्वेस्टमेंटस काॅरपोरेशन, (2006) 2 एससीसी 619, प्रोफेसर यशपाल बनाम स्टेट आफ छत्तीसगढ़, (2005) 5 एससीसी 420; दी गुजरात यूनिवर्सिटी बनाम कृष्णा रंगनाथ मुधोलकर, (1963) सुप्रा. 1 एससीआर 112; स्टेट आफ टी.एन बनाम अभियमन एजुकेशनल एंड रिसर्च इंस्टीट्यूट, (1995) 4 एससीसी 104 और डॉ. प्रीति श्रीवास्तव बनाम स्टेट आफ एम.पी., (1997) 7 एससीसी 120, रेफर किये गये।

2. सूचना संचार को यदि विज्ञान के उच्च स्तर तक माना जाये या जैसी भी स्थिति हो संविधान के अनुच्छेद 73 के तहत एक नीतिगत निर्णय के आधार पर किया जा सकता है, उन्हें वैसा ही पढ़ा जाना चाहीये

जैसा दिखाई दे और सिर्फ पढ़ना यह दिखाने के लिए अच्छा है कि केंन्द्र सरकार या जैसा भी मामला हो, यूजीसी ने राज्य सरकार या युनिवर्सिटीज पर बाध्यता का तत्व पेश नहीं किया है इसलिए भारत के संविधान की प्रविष्टि 66 की लिस्ट (1) तथा (2) प्रविष्टि 25 की लिस्ट (3) में जाने और जांचने का कोई औचित्य नहीं है, खासकर जब योजना के विशिष्ट शब्द इसके बाध्यकारी होने का सुझाव नहीं देते है और स्वैच्छिक होने का सुझाव देते है।(पैरा नम्बर-15)(181-एचः-182-ए,बी)

3. एक बार जब योजना ने यह सुझाव दिया कि इसे राज्य सरकार की 'इच्छा पर छोड़ दिया गया है तो 'इच्छा शब्द को अप्राकृतिक अर्थ देने की कोशिश करने का कोई मतलब नहीं होगा। इसी प्रकार 'गेमट' शब्द की व्याख्या में जाने का भी कोई औचित्य नहीं होगा कि एक बार राज्य सरकार ने योजना के एक हिस्से को स्वीकार कर लिया तो पूरी योजना को स्वीकार करना होगा क्योंकि यह अनावश्यक अभ्यास होगा।(पैरा नम्बर-16) (182-सी,डी)

4.1. यहां एक ऐसा मामला है जहां कोई विधान नहीं है। भले ही योजना को संविधान के अनुच्छेद 73 के तहत नीति वक्तव्य के उच्च स्तर पर ले जाया गया हो, योजना स्वयं स्वैच्छिक होने और बाध्यकारी न होने का सुझाव देती है और योजना स्वयं राज्य सरकार को इसे स्वीकार करने या न करने का विवेक देती है।(पैरा नम्बर-18)(182-जीः183-ए)

टी.पी जॉर्ज बनाम स्टेट आफ केरला(1992) सुप्रा.3 एससीसी191 और प्रोफे.यशपाल स्टेट आफ छत्तीसगढ (2005) 5 एससीसी 420,संदर्भित।

4.2 वर्तमान मामले में इसपर विचार करने के लिए कोई कानून नहीं है। जहां योजना स्वयं राज्य सरकार को यह विवेकाधिकार देती है और जहां राज्य सरकार उसी विवेकाधिकार का इस्तेमाल योजना के एक भाग को स्वीकार करने में करती है, न की पूरी योजना को, तो यह राज्य सरकार की शक्तियों के तहत होगा कि राज्य सरकार योजना में सेवानिवृति की आयु बढाने की योजना को स्वीकार न करे। (पैरा नम्बर-18)(183-बी,सी)

5. यह पुनः दोहराया गया कि सेवानिवृति की आयु कितनी होनी चाहीये, के संबंध में नीति बनाना इस न्यायालय का कार्य नहीं है क्योंकि ऐसा करने से विाधायिका की शक्तियों का अतिलंघन होगा। यदि राज्य सरकार अपने विवेक से जो इस योजना में स्वीकार्य है, आयु को बहाल रखने का निर्णय लेती है और 60 या 62 तक नहीं बढाती है, तो यह पूर्ण रूप से उचित था।(पैरा नम्बर-19)(183-सी,डी)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील की संख्या 6686-6689/2003

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, हैदराबाद के डब्ल्यू.पी. की संख्या 11396/2000,3206,26171/1999 और डब्ल्यू.पी. संख्या 24578/1998 में पारित अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 23.04.2001 और 09.02.2001

से।

साथ

सी.ए.संख्या:6668-6678,6684,6685,6690,6691 और 6679-6683/2003.

एच.एस गुरूराज राव, के. मारूती राव, के.राधा, अंजनी अजयगर, एस. उषा रेडी, डी महेश बाबू, हरीशंकर जी(फोर लायरस नीट एण्ड कम्पनी) पी. विनय कुमार, डी. भारती रेडी, राजीव एम रॉय राजीव के विरमानी, टी.वी.रतनाम, जी. रामकृष्णप्रसाद और सुयोधन ब्यारापानेनी उपस्थित पक्षकारान की और से।

न्यायमृर्ति वी.एस. शिरपुरकर द्वारा यह निर्णय पारित किया गया-

1. सेवानिवृती की आयु के संबंध में एक सामान्य मुदा उठाते हुये उच्च न्यायालय में कई रिट याचिकाऐ दायर की गई। उक्त सभी याचिकाओं के याचिकाकर्ता विभिन्न नीजि कॉलेजो में कार्यरत होकर सरकार द्वारा प्रदत्त संयुक्त अनुदान लाभ प्राप्त कर रहे थे सभी याचिकाकर्ता, व्याख्याता, प्रोफेसर, रीडरस, लाईब्रेरियन्स, शारीरिक शिक्षा शिक्षक आदि के रूप में सेवाये दे रहे थे उक्त सभी रीट याचिकाओं में उनकी सामान्य प्रार्थना यह थी कि उनकी सेवानिवृति की आयु को 58 या 60 वर्ष जैसा भी मामला हो को 62 वर्ष की आयु तक बढानी चाहिए, इसके अलावा सभी याचिकाकर्ताओं द्वारा संसूचना संख्या एफ.1.22/97-यू.आई. दिनांक

27.7.1998 पर भरोसा किया गया। सभी याचिकाकर्ताओं द्वारा यह दावा किया गया कि सबसे पहले भारत सरकार का निर्णय कॉलेजों, विश्वविद्यालयों के लिए अनिवार्य और बाध्यकारी था। इस बात को पुनः दोहराया गया कि केन्द्र सरकार वेतनमानों में संशोधन की योजना करने में राज्य सरकार को वित्तीय सहायता प्रदान कर रही थी। याचिकाकर्ताओं के लिए पत्र दिनांक 27.7.1998 को उद्वृत करना बहत्तर होगा, क्योंकि रिट याचिकाओं में की गई प्रार्थनाओं का मुख्य और एक मात्र आधार यही है, इत्यादि दुर्भाग्य से उन सभी रिट याचिकाओं की प्रतियां प्रस्तुत नहीं की गई। जबकि उनके विरूद्व अपीलें प्रस्तुत की गई है।

> "विषय-पांचवे केन्द्रीय वेतन आयोग की सिफारिशों पर केन्द्र सरकार के कर्मचारियों के वेतनमान में संशोधन के बाद विश्वविद्यालयों और कालेजों में शिक्षकों के वेतनमान में संशोधन"

मैडम/सर,

मुझे यह कहने का निर्देश प्राप्त हुआ है कि उच्च शिक्षा पर मानकों पर विचार,निर्धारण और रख रखाव के लिए संवैधानिक जिम्मेदारी को पूर्ण करने के लिए, केन्द्र सरकार और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग(यूजीसी) ने समय-समय-पर कई आवश्यक प्रयास किये है। इन प्रयासों के एक भाग के रूप में केन्द्र सरकार ने केन्द्रीय युनिवर्सिटी के शिक्षकों तथा कॉलेजों में

शिक्षण पेशे में प्रतिभा को आकर्षित करने और बनाये रखने के लिए वेतनमान में संशोधन किया है। संशोधित वेतनमान और वेतनमान में संशोधन की योजना के अन्य प्रावधानों का विवरण देने वाले यूजीसी को सम्बोधित पत्र की एक प्रति संलग्न है।

2. अपनी संवैधानिक जिम्मेदारी को पूर्ण करने हेतु केन्द्र सरकार ने उन राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता प्रदान करना जारी रखने का निर्णय लिया है, जो निम्नलिखित नियमों व शर्तो के अधीन वेतनमान में संशोधन की योजना को लागु करना चाहते है-

(ए) केन्द्र सरकार उन राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता प्रदान करेगी जिन्होने उक्त संशोधन वेतनमान का विकल्प चूना है, जो संशोधन के क्रियान्वयन में शामिल अर्थात व्यय के अस्सी प्रतिशत सीमा तक है।

(बी) राज्य सरकार शेष 20 प्रतिशत व्यय को अपने स्तर पर अपने श्रोत से पूर्ण करेगी।

(डी) उपर बताई गई वित्तीय सहायता दिनांक 1.1.1996 से 31.3.2000 तक की अवधि के लिए प्रदान की जायेगी।

(ई) विश्वविद्यालय और कॉलेज शिक्षकों के वेतनमान आदि में संशोधन की पूरी देनदारी दिनांक 1.4.2000 से राज्य सरकारों द्वारा स्वयं के उपर ले जी जायेगी।

(एफ) केन्द्रीय सहायता केवल उन पदों के संबंध में वेतनमान में

संशोधन की सीमा तक संबंधित होगी जो दिनांक 1.1.1996 तक अस्तित्व में थी या उक्त दिनांक तक भरे गये थे।

3. राज्य सरकारें स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये अपने विवेक से योजना में उल्लेखित वेतनमान से भिन्न वेतनमान लागु करने का निर्णय ले सकती है और दिनांक 1 जनवरी, 1996 या उसके पश्चात की किसी तारीख से संशोधित वेतनमान लागु कर सकती है। ऐसे मामलों में वेतनमान में प्रस्तावित संशोधन का विवरण या जिस तारीख से योजना लागु की जानी है उसे अनुमोदन के लिए केन्द्र सरकार को अनुमोदन हेतु प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा केन्द्र सरकार के अनुमोदन की शर्तो के अधीन अथवा केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित नियमों एवं शर्तो तथा संशोधन के साथ योजना के क्रियान्वयन के लिए राज्य सरकारों को केन्द्रीय सहायता उपलब्ध होगी बशर्ते की संशोधित वेतनमान योजना के तहत अनुमोदित वेतनमान से अधिक न हो।

4. योजना के क्रियान्वयन के लिए केन्द्रीय सहायता का भुगतान भी इस शर्त के अधीन है कि वेतनमान में संशोधन की पूरी योजना इस संबंध में यूजीसी द्वारा विनियमों के माध्यम से निर्धारित की जाने वाली सभी शर्तो के साथ लागु की जाती है, तो राज्य सरकारों द्वारा उक्त योजना को एक समग्र योजना के रूप में बिना किसी संशोधन के क्रियान्वयन की दिनांक उपर बताये अनुसार वेतनमान को छोडकर लागु की जायेगी।

5. इस योजना के प्रावधानों को शामिल करने के लिए विश्वविद्यालयों और कॉलेजों के प्रबन्धक को अपने कानून, अध्यादेश,नियमों, विनियमों आदि में आवश्यक परिवर्तन करना आवश्यक होगा।

6. उपर बताई गई तर्ज पर योजना के क्रियान्वयन के लिए विस्तृत प्रस्ताव तुरन्त तैयार किया जायेगा और मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग को जांच के लिए भेजा जायेगा ताकि उपर बताई गई सीमा तक संशोधित वेतनमान के क्रियान्वयन हेतु केन्द्रीय सहायता स्वीकृत की जा सके।

7. योजना के क्रियान्वयन में यदि कोई विसंगति हो तो उसे स्पष्टीकरण के लिए मानव संशाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग के ध्यान में लाया जा सकता है।

8. यह योजना सभी विश्वविद्यालयों(कृषि विश्वविद्यालयों को छोडकर) और कॉलेजों (कृषि, चिकित्सा और पशु चिकित्सा, विज्ञान कालेजों को छोडकर) में विश्वविद्यालयों के विशेषाधिकारों में भर्ती शिक्षकों पर लागु होती है।

2. याचिकाकर्ताओं ने वेतनमान में संशोधन पर यूजीसी अधिसूचना संख्या 1.3.1494(पीएस) दिनांक 24.12.1998 पर भी भरोसा किया। यह पूरी योजना सचिव विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रसारित सूचना थी कुछ अन्य पत्रों जैसे दिनांक 22.9.1998 और 6.11.1998 के पत्रों पर भी

भरोसा किया गया और अन्त में उपर्युक्त तीन पत्रों के आधार पर मत्रालय द्वारा भेजे गये एक समेकित बयान पर भी काफी भरोसा किया गया। उस समेकित विवरण से हमारा ध्यान निम्नलिखित पैरा संख्या (vi)की ओर आकर्षित किया गया:-

> "(vi) सेवानिवृति की आयु (अनुसंलग्नक-1)
>
> विश्वविद्यालय और कॉलेज के शिक्षकों, रजिस्ट्रार, लाईब्रेरियन, शारीरिक शिक्षा क्रमिकों, परीक्षा नियंत्रक, वित्तीय अधिकारी और ऐसे अन्य विश्वविद्यालय कर्मचारियें की सेवानिवृति की आयु जिन्हे शिक्षकों के बराबर माना जाता है और जिनकी सेवानिवृति की आयु 60 वर्ष थी वह 62 वर्ष होगी और उसके बाद सेवा में कोई विस्तार नहीं दिया जायेगा, हालांकि यूजीसी द्वारा बनाये गये मौजुदा दिशा निर्देशों के अनुसार एक विश्वविद्यालय या कॉलेज इन सेवानिवृत शिक्षकों को 65 वर्ष की आयु तक फिर से नियुक्त करने के लिए खुला होगा। (अनुसंलग्नक-1 और 3)"

3. सक्षेप में सिर्फ में कुछ रिट याचिकाओं का दावा पूरी तरह से इस सामग्री पर आधारित था कि सेवानिवृति की आयु 62 वर्ष तक बढा दी गई थी, परन्तु बात यही तक नहीं रूकी।

4. दिनांक 29.6.1999 को आन्ध्रप्रदेश राज्य ने जीओएमएस 208

पारित किया। यह मुख्य रूप से उपरोक्त समेकित विवरण और उपर लिखित पत्रों में शामिल शिक्षकों और यूजीसी अन्य लोगों के लिए यूजीसी वेतनमान के क्रियान्वयन के लिए था। वेतन की सीमा तक आन्ध्रप्रदेश राज्य उक्त योजना को लागु करने के लिए सहमत हो गई। यह स्थिति स्पष्ट रूप से पांच विशेषज्ञों की एक समिति के गठन के बाद ली गई, जो कि जीओएमएस 208 के पैरा (iv) से स्पष्ट है। समिति ने क्रियान्वयन से संबंधित मुदो का गहन अध्ययन करने के बाद राज्य सरकार को रिपोर्ट सौपी थी और यह रिपोर्ट दिनांक 30.4.1999 को सरकारों को पेश की। इस रिपोर्ट के आधार पर ही उपरोक्त जीओएमएस 208 जारी किया गया। जीओएमएस का पैरा-5 इस प्रकार है-

> "5 संशोधित युजीसी स्केल और भारत सरकार के सुझावों तथा पांच सदस्य समिति की सिफारिशों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद जैसा कि पैरा संख्या-4 में वर्णित है आन्ध्रप्रदेश की सरकार ने राज्य के विश्वविद्यालयों और काॅलेजों में शिक्षकों पुस्तकालयध्यक्षों और शारीरिक शिक्षा क्रमिको के लिए संशोधित यूजीसी वेतनमान का विस्तार करने का निर्णय लिया जैसा कि इस आदेश की अनुसूची मे दिखाया गया है।"

शेष जीओएमएस इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि यह उन अन्य शर्तो से

संबंधित है जिसके अधीन संशोधित वेतनमान प्रदान किया गया था यद्यपि जीओएमएस के पैरा-14 में यह सुझाव दिया गया था कि भर्ती एवं योग्यता, चयन प्रक्रिया, कैरियर उन्नति, शिक्षण दिवस, कार्यभार, पेशेवर नैतिकता संहिता, जवाबदेही आदि जैसी सेवा शर्ते आदेश के परिशिष्ट में दर्शाई जायेगी। यद्यपि याचिकाकर्ताओं की नाराजगी को देखते हुये परिशिष्ट में सेवानिवृति की आयु को भी सुझाव दिया गया प्रासंगिक पैरा निम्नप्रकार है-

"15.शिक्षकों की सेवानिवृति और पुर्ननियोजन-

(1) विश्वविद्यालय आयोग ने विश्वविद्यालयों और कॉलेजों के शिक्षकों के लिए समान रूप से सेवानिवृति की आयु 62 वर्ष होने की सिफारिशें की है। वर्तमान में आन्ध्रप्रदेश राज्य में कॉलेज शिक्षकों के लिए सेवानिवृति की आयु 58 वर्ष तथा विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के लिए 60 वर्ष है इस मुदे पर काफी विस्तार से विचार करने के बाद और यह ध्यान में रखते हुये कि यदि सेवानिवृति की आयु 62 वर्ष तक बढाने के मुदे पर सहमति व्यक्त की जाती है तो इसका परिणाम और सेवानिवृति की आयु की घोषणा के प्रतिकूल प्रभावों के फलस्वरूप सरकार ने यह निर्णय लिया कि सेवानिवृति की आयु में कोई बदलाव नहीं होना चाहिए तथा सेवानिवृति की आयु कॉलेज शिक्षकों के लिए 58 वर्ष और विश्वविद्यालयों के

शिक्षको के लिए 60 वर्ष ही रखी जायेगी।

(2) यूजीसी द्वारा बताये दिशा निर्देश के अनुसार शिक्षकों को सेवानिवृति के पश्चात भी 65 वर्ष की आयु तक पुर्ननियोजित करने का विकल्प विश्वविद्यालय या कॉलेजो के लिए खुंला है।

(3) रजिस्ट्रार, लाईब्रेंरियन, शारीरिक शिक्षा क्रमिक, परीक्षा नियंत्रक, वित्तीय अधिकारी तथा विश्वविद्यालय के ऐसे क्रमिक जिन्हे शिक्षकों के बराबर माना जा रहा है जिनकी सेवा निवृति की आयु 60 वर्ष थी वह 60 वर्ष ही रहेगी। रजिस्ट्रार, लाईब्रेरियन और शारीरिक शिक्षा निदेशकों के लिए पुनः रोजगार की सुविधा प्रदान नहीं की गई।"

और यही वह पैरा है जिसने याचिकाकर्ताओं को व्यथित कर दिया, हालांकि कुछ याचिकाकर्ता जीओएमएस के पारित होने से पहले अदालत में चले गये थे, लेकिन अन्य रिट याचिकाऐं दायर की गई, जहां उन्होने जीओएमएस 208 और विशेष रूप से परिशिष्ट के पैरा संख्या 15 को चुनौति है जिसे उपर उद्वृत किया गया है जिन रिट याचिकाकर्ताओ ने इस तिथि से पहले रिट याचिकाऐ दायर की थी, उन्ही रिट याचिकाओं में संशोधन करने और अपनी रिट याचिकाओं में इस जीओएमएस को चुनौति देने की जहमत भी नहीं उठाई। हालांकि अजीब बात यह है कि आक्षेपित निर्णयों को चुनौति

देने वाली विशेष अनुमति याचिकाऐ दायर करते समय, हम यह पाते है कि एसएलपी के निकाय में जीओएम को चुनौति दी गई है। यद्यपि उच्च न्यायालय स्तर पर इसे ऐसा माना गया जैसा कि सभी रिट याचिकाओ ने जीओएमएस 208 को चुनौति दी थी क्योंकि यह उपरोक्त तीन पत्रों का परिणाम था जिनका उल्लेख उपर पहले ही कर चुके है।

5. उच्च न्यायालय ने यह विचार किया कि यह मामला पूरी तरह से टीपी जॉर्ज और अन्य बनाम केरला राज्य 1992 सप्ल.3 एससीसी 191 के मामले में इसी न्यायालय के फैसले द्वारा याचिकाकर्ताओं के खिलाफ कवर किया गया था उच्च न्यायालय ने, विशेष रूप से उस मामले में एक पैराग्राफ पर भरोसा किया जो इस प्रकार है-

> "यद्यपि अदालत ने माना कि सम्बद्व कालेजो के शिक्षकों के मामले में सेवानिवृति की आयु 5 वर्ष तय की गई है,जो यद्यपि कम है। एक शिक्षक कई वर्षो का शिक्षण अनुभव प्राप्त करने के बाद ही वास्तव में अपने काम में निपूर्ण हो जाता है और यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि छात्रों को सेवानिवृति की अनुचित कम आयु के कारण शिक्षकों के अनुभव का लाभ खोना पडता है। हालांकि सेवानिवृति की सही आयु निर्धारित करना अदालत का काम नहीं है, लेकिन यह एक नीतिगत कार्य है जिसके लिए काफी विशेषज्ञता की आवश्यकता होती

है जिसे ठीक से राज्य सरकार या संबंधित विश्वविद्यालयों के राज्य विधान मण्डल द्वारा किया जा सकता है। यह आशा की जाती है कि निकट भविष्य में राज्य सरकार इस प्रश्न पर विचार करने और सेवानिवृति की आयु निर्धारित करने में सक्षम होगी जिसे वह सबसे उपर्युक्त समझे।"

उस फैसले में इस न्यायालय ने केरला उच्च न्यायालय की डिविजन बैंच के आक्षेपित फैसले की उपर्युक्त टिप्पणियों पर अनुमोदन की मोहर लगा दीः-

"यद्यपि याचिका के खण्ड-26 में प्रावधान है कि शिक्षकों के लिए सेवानिवृति की आयु 60 वर्ष होनी चाहिए और योजना इस संबंध में सहायता प्रदान करने में कुछ सुधारों पर विचार करती है, यह ऐसी योजना नहीं है जो राज्य सरकार या केरला राज्य पर संवैधानिक रूप से बाध्यकारी हो। केरला राज्य में प्रासंगिक कानूनों के तहत विभिन्न विश्वविद्यालय कार्य कर रहे है। राज्य सरकार ने 13 मार्च,1990 के अपने आदेश द्वारा विश्वविद्यालय के अध्यापकों जिसमे केरल कृषि विश्वविद्यालय, सम्बद्व कालेज, विधि महाविद्यालय, इंजीनियरिंग कॉलेज और योग्य लाईब्रेरियन तथा शारीरिक शिक्षा शिक्षकों के सम्बद्व में दिनांक 1 जनवरी 1986 से

वेतनमान के संशोधन सहित यूजीसी योजना को लागु किया है। यद्यपि यह स्पष्ट शर्त के अधीन है कि जहां तक सेवानिवृति की आयु का संबंध है वर्तमान निर्धारण 55 वर्ष है जो जारी रहेगा। अपीलकर्ता का यह तर्क कि राज्य सरकार ने यूजीसी योजना को स्वीकार कर लिया है और चूंकि यह योजना 60 वर्ष की आयु का प्रावधान करती है, एक बार राज्य सरकार ने इस योजना को स्वीकार कर लिया तो योजना के सभी खण्ड लागु हो जाते है इस विवाद को स्वीकार करना सम्भव नहीं है। सर्वप्रथम जैसा कि पहले कहा गया है कि यूजीसी योजना किसी वैधानिक आदेश के कारण लागु नहीं होती है जिससे सरकार और विश्वविद्यालयों के लिए इसकी पालना करना अनिवार्य हो जाता है इसलिए राज्य सरकार के पास इस योजना को स्वीकार करना अथवा न करने का विवेकाधिकार था राज्य सरकार ने अपने विवेक से इस योजना को स्वीकार करने का निर्णय लिया है, जो इस शर्त के अधीन है अर्थात जहां तक सेवानिवृति की आयु का संबंध है, वो योजना में प्रदान की गई उच्च आयु के निर्धारण को स्वीकार नहीं करेगे। राज्य सरकार द्वारा योजना को इसी प्रकार संशोधित रूप में स्वीकार करने के बाद शिक्षकों को योजना से मिलने वाला लाभ उसी समय तक

प्राप्त हो सकता है जिस समय तक इसे राज्य सरकार तथा संबंधित विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकार किया गया हो। अपीलकर्ता यह दावा नहीं कर सकता कि योजना का बडा हिस्सा सरकार द्वारा स्वीकार कर लिया गया है उनकी सेवानिवृति की उच्च आयु के निर्धारण से सबंधित खण्ड को स्वीकार न करने का कोई अधिकार नहीं है। यह राज्य सरकार तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के बीच का मामला है जिसे योजना द्वारा कुछ लाभ प्रदत्त किये गये थे इसे लागु करने के मामले में राज्य सरकार द्वारा अपनाये गये रवैये के बारे में उसकी सन्तुष्टि के आधार पर यह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पर निर्भर करता है कि वह योजना का लाभ बढाये या नहीं। यह पूर्ण रूप से राज्य सरकार और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के बीच का मामला है संबंधित निजी संसाधनों के शिक्षक प्रासंगिक वैधानिक अधिनियम के तहत बनाये गये कानूनों द्वारा शास्ति होते है। जबकि सेवानिवृति की आयु 55 वर्ष करने तथा राज्य सरकार द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सिफारिशों के तहत सेवानिवृति की आयु 60 वर्ष को स्वीकार नहीं कर लेती तब तक शिक्षक 60 वर्ष की सेवानिवृति की आयु के अधिकार के रूप में दावा नहीं कर

सकते।"

इसी परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुये उक्त दोनों अलग-अलग निर्णयों द्वारा रिट याचिकाऐ खारिज की गई जिनपर इस अपील द्वारा विचार किया जाना है।

6. अपीलकर्ताओं की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील श्री गुरूराजाराव ने सबसे पहले तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने टीपी जॉर्ज के मामले (सुप्रा प्रा)में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करके गलती की है। विद्वान वकील के अनुसार बाद के घटनाक्रम को देखते हुए निर्णय लागु करना बदं कर दिया है। विद्वान वकील ने दूसरा तर्क यह दिया कि पत्र दिनांक 27.7.1998 की भाषा से ही पता चलता है कि यह राज्य सरकार या विश्वविद्यालयों और कॉलेजों जैसे अन्य शैक्षणिक संस्थानों, जैसा भी मामला हो के लिए पत्र को नजरअंदाज करने के लिए खुला नहीं था, विशेष रूप से इसमे दिए गए सुझाव को रिटायरमेंट की उम्र 62 साल होनी चाहिए। इसमे विद्वान वकील ने उस पत्र में प्रयुक्त शब्द "इच्छा" पर बहुत जोर दिया और सुझाव दिया कि इस शब्द की व्याख्या यह नहीं की जानी चाहिए कि लागू की जाने वाली योजना के संबंध में राज्य सरकार के पास कोई विवेकाधिकार बचा हुआ है। विद्वान वकील ने यह भी दावा किया कि यदि योजना को लागू करने के लिए चुना गया था, तो उसे एक समग्र योजना के रूप में लागू किया जाना था क्योंकि पूरी योजना एक ही

दस्तावेज में निहित है जो आसान और स्पष्ट थी। ओपी सिंगला बनाम भारत संघ {(1984)4 एससीसी 450}के फैसले पर भरोसा करते हुए यह आग्रह किया गया था कि जब कोई नियम या धारा एक अभिन्न योजना का हिस्सा है, तो उसपर अलग से विचार नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा करने से कुछ अंतर-संबंधित प्रावधान निरर्थक या अर्थहीन हो जाते है। माणिकलाल मजूमदार बनाम गौरंगा चंद्र डे {(2005)2 एससीसी 400}पर भरोसा करते हुए विद्वान वकील ने सुझाव दिया कि एक खंड के अर्थ को सुनिश्चित करने के लिए अदालत को पूरे कानून को देखना चाहिए कि खण्ड के पहले और बाद के प्रावधान क्या है, इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता द्वारा न्यायिक दृष्टान्त रेफर किये गये चंद्रिकाप्रसाद यादव बनाम बिहार राज्य {(2004)6 एससीसी 331}एडव इन्वेस्टमेंटस(पी)लिमिटेड बनाम गुजरात इंडस्ट्रियल इन्वेस्टमेंट कारपोरेशन{(2006)2 एससीसी 619} जो यह बताते है कि कानून निर्देशात्मक होगा या आज्ञापक यह उसकी योजना पर निर्भर करेगा।

7. पत्र का हवाला देते हुए, विद्वान वकील ने आगे सुझाव दिया कि पत्र की भाषा को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट था कि इसमे समग्र रूप से योजना के संबंध में राज्य सरकार के पास कोई विवेकाधिकार नहीं छोडा है। पत्र के पैराग्राफ 4 और 5 का हवाला देते हुए विद्वान वकील ने सुझाव दिया कि विश्वविद्यालयों और कालेजों के प्रबंधन को योजना के प्रावधानों को शामिल करने के लिए अपने कानून, नियमों, विनियमों आदि में आवश्यक

बदलावा करने का स्पष्ट सुझाव दिया गया था। पैरा-5 में दिए गए ये निर्देश आज्ञापक प्रकृति के थे और इसलिए विश्वविद्यालयों और राज्य सरकार के पास इस योजना को एक समग्र योजना के रूप में लागू करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं था। विद्वान वकील ने "आवश्यक होगा"और "आवश्यक परिवर्तन करने के लिए" शब्दावली पर बहुत जोर दिया। विद्वान वकील ने हमें पूरे पत्र को पैराग्राफ दर पैराग्राफ समझाया और इस बात पर जोर दिया कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग(यूजीसी) द्वारा सुझाई गई योजना न केवल आज्ञापक थी बल्कि विश्वविद्यालयों और राज्यों के लिए बाध्यकारी भी थी और इसलिए यह आवश्यक था कि सेवानिवृति की आयु बढाकर 62 वर्ष या 60 वर्ष जैसा भी मामला हो कर दिया जाए।

8. हमें संघ सूची की प्रविष्टि संख्या 66 के माध्यम बताया गया और यह सुझाव देने की कोशिश की गई कि पत्र या योजना जैसा भी मामला हो एक कानून की प्रकृति में थे एक केंद्रीय कानून जो राज्य और राज्य के विधान के विरूद्व उस सीमा तक बाध्यकारी होगा जिसका विस्तार निरर्थक कानून के रूप में पढा जाना चाहीये। विद्वान वकील ने पश्चातवर्ती पत्र दिनांक 6.11.1998 और विशेष रूप से बाद के घटनाक्रम का भी संदर्भ दिया और उसमे यह पढना चाहा कि सेवानिवृति की आयु 62 वर्ष या 60 वर्ष जैसा भी मामला हो होनी चाहिए।

9. जहां तक टीपी जॉर्ज के मामले (सुप्रा) में निर्णय का सवाल है

वकील ने इस न्यायालय के फैसले प्रोफेसर यशपाल और अन्य बनाम छत्तीसगढ राज्य और अन्य{(2005) 5 एससीसी 420} पर बहुत अधिक भरोसा किया और उस उद्देश्य के लिए सूची III की प्रविष्टि 25 के मुकाबले सूची 1 से प्रविष्टि 66 के दायरे का भी तर्क दिया। विद्वान वकील का यह तर्क था कि यशपाल का मामला टीपी जॉर्ज के मामले (सुप्रा) में निर्धारित कानून को स्पष्ट रूप से खारिज कर देता है। हमे सूची 1 की प्रविष्टि 66 के महत्व को समझाने के लिए जिसे सूची III की प्रविष्टि 25 के साथ सामजस्य स्थापित करना आवश्यक था, विद्वान वकील ने गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद बनाम कृष्णा रंगनाथ गुधोलकर और अन्य(1963) अनुपूरक 1 एससीआर 112) में इस न्यायालय के प्रसिद्व फैसले के माध्यम से उठाया। इसमे विद्वान वकील ने आगे आग्रह किया कि विश्वविद्वालय का पूरा दायरा जिसमे शिक्षण आदि शामिल है, मानकों के निर्धारण की विशिष्ट प्रकृति के कारण राज्य विधान के दायरे में नहीं आएगा क्योंकि उच्च शिक्षा के लिए संस्थानों के मानक संघ सूची में होने के कारण संसद ही कानून बनाने में सक्षम है। विद्वान वकील इसलिए, सादृश्य को आगे बढाते हुए सुझाव देते है कि जो योजना केन्द्र सरकार द्वारा सौपी जा रही थी वह केन्द्रीय कानून के रूप में बाध्यकारी थी। विद्वान अधिवक्ता ने तमिलनाडू राज्य बनाम अभियमान एजुकेशनल एण्ड रिसर्च इंस्टीटयूट{(1995)4 एससीसी 104} के इसी न्यायलाय के एक और प्रसिद्व फैसले के बारे में बताया इसके अतिरिक्त एक अन्य प्रसिद्व फैसला डॉ.प्रीति

श्रीवास्तव बनाम मध्यप्रदेश राज्य {(1999) 7 एससीसी 120} का भी उल्लेख किया जिसे यशपाल के मामले में संदर्भित किया गया था पर भी विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया। संक्षेप में तर्क का मुख्य आधार यह था कि विश्वविद्यालय शिक्षा जो उच्च शिक्षा थी और सूची 1 की प्रविष्टि 66 के तहत कवर की जाएगी और इसलिए, यूजीसी द्वारा की गई सिफारिशें राज्य सरकार और विश्वविद्यालय के खिलाफ बाध्यकारी थी और उस हद तक परस्पर विरोधाभाषी राज्य कानूनों को खारिज कर दिया गया था। यह सुझाव देने की कोशिश की गई कि योजना को लागू करने के लिए राज्य सरकारों को सम्बोधित भारत सरकार का पत्र सूची 1 की प्रविष्टि 66 के संबध में भारत के संविधान के अनुच्छेद 73 के तहत कार्यकारी शक्तियों के प्रयोग का परिणाम है और इसलिए, केन्द्र सरकार का ऐसा निर्णय राज्य सरकार और विश्वविद्यालयों के लिए यह विषय संघ सूची से संबंधित होने के कारण बाध्यकारी था। यह भी सुझाव दिया गया था कि राज्य सरकार ने जीओएमएस 208 दिनांक 26.6.1999 में योजना के आंशिक कार्यान्वयन को स्वीकार कर लिया था और दिनांक 27.7.1998 के पत्र के पैराग्राफ 4 में निहित स्पष्ट निर्देशों के मद्देनजर ऐसा आंशिक कार्यान्वयन स्वीकार्य नहीं था। अन्य अपीलकर्ताओं द्वारा अन्य अपीलों में भी लगभग यही लिखित प्रस्तुतियां दी गई है।

10. हालांकि, आन्ध्रप्रदेश राज्य ने स्पष्ट रूप अपनाया कि यूजीसी के निदेशक द्वारा लिखे गए वर्तमान पत्र के आधार पर राज्य सरकार को

परमादेश जारी नहीं किया जा सकता है। यह बताया गया है कि पत्र की भाषा यह बताने के लिए काफी स्पष्ट थी कि यह योजना स्वैच्छिक प्रकृति की थी। यह बताया गया कि पत्र में कही भी यह सुझाव नहीं दिया गया था कि राज्य सरकारों को पत्र की सामग्री को लागू करना आवश्यक था। विद्वान वकील ने टीपी जॉर्ज के मामले (सुप्रा) के फैसले पर बहुत अधिक भरोसा किया और बताया कि उस मामले ने अपीलकर्ताओं के खिलाफ मामला तय कर दिया था। अन्य उत्तरदाताओं के विद्वान वकील द्वारा यह भी बताया गया कि पत्र की भाषा या उस मामले के बाद के पत्र और योजना स्पष्ट रूप से सुझाव दे रही थी कि इसे स्वीकार करना या न करना राज्य सरकार की ओर से स्वैच्छिक होगा। इस योजना के किसी विधान या आदेश या नीतिगत निर्णय की प्रकृति में होने का कोई सवाल ही नहीं था। विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया कि भले ही यह एक नीतिगत निर्णय था, योजना ने स्वयं सुझाव दिया कि यह स्वैच्छिक थी और योजना को लागू करना या न करना राज्य सरकार की "इच्छा" पर निर्भर था। इसलिए अस्वीकार्य एवं अलग-अलग अर्थ बताना और योजना में कुछ ऐसा पढना अस्वीकार्य था जो वहां नहीं है। दूसरे वकील ने यह भी बताया कि अपीलकर्ता यह दिखाने में पूरी तरह से विफल रहा कि कैसे टीपी जॉर्ज के मामले में निर्णय वर्तमान मामले पर लागू नहीं था या यशपाल के मामले में उस मामले को खारिज कर दिया गया था। इसी पृष्ठभूमि में हमे इस मामले पर विचार करना होगा।

11. अपील में उच्च न्यायालय के निर्णय निस्संदेह सबसे पहले योजना की स्पष्ट और सरल भाषा पर और दूसरे टीपी जॉर्ज के मामले में रिपोर्ट किए गए निर्णय पर आधारित है।

12. इसलिए, हम पहले इस बात की जांच करेगे कि क्या दो डिवीजन बेंचों ने अपीलकर्ताओं के खिलाफ दिए गए फैसले पर सही भरोसा किया हैं हमने फैसले की विस्तार से जांच की है। यह भी एक ऐसा मामला है जहां यूजीसी ने 1986 में एक योजना शुरू की थी जिसे मेहरोत्रा समिति की रिपोर्ट के अनुसार केन्द्र सरकार द्वारा तैयार किया गया था। उस योजना में मानव संसाधन विकास मंत्रालय, शिक्षा विभाग द्वारा सभी राज्यों, केन्द्रशासित प्रदेशों के शिक्षा सचिवों को सम्बोधित दिनांक 17.6.1987 का एक परिपत्र था और उसमे स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि योजना को अपनाना स्वैच्छिक था और एकमात्र राज्य सरकार द्वारा इस योजना को नहीं अपनाने का परिणाम यह हो सकता है कि राज्य सरकार को वेतन संशोधन को प्रभावी करने में योजना द्वारा अनुशंसित पैमाने में शामिल अतिरिक्त व्यय के 80 प्रतिशत की सीमा तक केन्द्र सरकार से प्रतिपूर्ति की पेशकश का लाभ नहीं मिल सकता है। इसलिए, तथ्यात्मक स्थिति लगभग वर्तमान मामले जैसी ही थी। इस न्यायालय ने विशेष रूप से केरल उच्च न्यायालय के फैसले में एक पैराग्राफ को मंजूरी दे दी है। जिसे हम पहले ही इस फैसलें में पैरा 5 में उद्धृत कर चुके है। इसमें केरल उच्च न्यायालय ने विशेष रूप से इस तर्क को खारिज कर दिया था कि राज्य सरकार ने

यूजीसी योजना को स्वीकार कर लिया है। और जैसा कि योजना प्रदान करती है 60 वर्ष की आयु के लिए, सेवानिवृति की आयु के संबंध में योजना का खण्ड भी लागू होगा। केरल उच्च न्यायालय ने विशेष रूप से आगे कहा था कि यूजीसी योजना लागू नहीं होती क्योंकि सरकार और विश्वविद्यालयों के लिए इसका पालना करना अनिवार्य नहीं था। केरल उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को इस योजना को स्वीकार करने या न करने का विवेकाधिकार पढा।

13. मौजूदा मामले में भी स्थिति अलग नहीं है। दिनांक 27.7.1998 के पत्र की भाषा से ही पता चलता है कि यह योजना स्वैच्छिक है और बिल्कुल भी बाध्यकारी नहीं है। इसके अलावा केरल उच्च न्यायालय के फैसले में यह निर्दिष्ट किया गया है कि शिक्षकों को एक विशिष्ट आयु का दावा करने का कोई अधिकार नहीं था क्योंकि इसी योजना में सुझाव दिया था कि योजना स्वयं स्वैच्छिक थी और बाध्यकारी नहीं थी। न्यायालय ने स्पष्ट रूप् से कहा कि अपीलकर्ता यह दावा नहीं कर सकता कि योजना का बडा हिस्सा सरकार द्वारा स्वीकार कर लिया गया है, उन्हे सेवानिवृति की उच्च आयु के निर्धारण से सबंधित खण्ड को स्वीकार न करने का कोई अधिकार नहीं है"। इसमे न्यायालय ने कहा कि यह राज्य सरकार और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के बीच का मामला है और यह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पर निर्भर करेगा कि वह इस योजना का लाभ दे या न दे। योजना के कार्यान्वयन के मामले में राज्य सरकार द्वारा

अपनाये गये रवैये से सन्तुष्ट है। अंततः यह स्पष्ट रूप से देखा गया कि जब तक राज्य सरकार ने सेवानिवृति की आयु 60 वर्ष तय करने की यूजीसी की सिफारिशों को स्वीकार नहीं किया है, तब तक शिक्षक यह दावा नहीं कर सकते कि वे 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर सेवानिवृत होने के हकदार है।

14. हमारे सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद, हम यह पता लगाने में सक्षम नहीं है कि केरल उच्च न्यायालय का निर्णय, जिसे इस न्यायालय ने मंजूरी दे दी है, किसी भी तरह से, इस मामले में मौजूद तथ्यात्मक स्थिति से अलग है। यही कारण है कि हमने न केवल 27.7.1998 के उपरोक्त पत्र को बल्कि उसके बाद के पत्रों और आगे के नीति वक्तव्य को भी बडे पैमाने पर उद्वृत किया है। इन सभी को पढने से इतना स्पष्ट है कि यह योजना स्वैच्छिक थी और यह राज्य सरकारों पर निर्भर था कि वह इस योजना को स्वीकार करे या न करे। फिर, भले ही राज्य सरकार ने योजना का एक हिस्सा स्वीकार कर लिया हो, लेकिन यह आवश्यक नहीं था कि सम्पूर्ण योजना राज्य सरकार द्वारा स्वीकार की जाऐ। वास्तव में बाद के घटनाक्रम से पता चलता है कि राज्य सरकार ने इस योजना को पूरी तरह से स्वीकार करने का विकल्प नहीं चुना है क्योंकि इसमे यूजीसी की ओर से सेवानिवृति की आयु बढाने के सुझावों को स्वीकार नहीं किया है।

15. एक बार जब हम योजना के स्पष्ट अध्ययन पर यह दृष्टिकोण

अपना लेते है, तो हमारे लिए सूची 1 में प्रविष्टि 66 की तुलना में सूची III में प्रविष्टि 25 के संबंध में श्री राव के बाद के तर्को का जायजा लेना आवश्यक होगा। हमारी राय में सूचना भले ही किसी कानून या जैसा भी मामला हो, संविधान के अनुच्छेद 73 के तहत एक नीतिगत निर्णय के आधार पर किया जा सकता है, उन्हे वैसे ही पढा जाना चाहिए जैसे वे दिखाई देते है और एक सहज/स्पष्ट पढना अच्छा है यह दिखाने के लिए पर्याप्त है कि केन्द्र सरकार या जैसा भी मामला हो, यूजीसी ने भी राज्य सरकार और विश्वविद्यालयों की तुलना में बाध्यता का तत्व पेश नहीं किया । इसलिए, हमे प्रविष्टियों पर जाने और यह जांचने में कोई औचित्य नहीं मिलता है कि क्या योजना बाध्यकारी थी, खासकर जब योजना के विशिष्ट शब्द इसे बाध्यकारी नहीं मानते थे और विशेष रूप से इसे स्वैच्छिक होने का सुझाव देते थे।

16. अधिकाशं बहस "इच्छा" और "विस्तार" शब्दों की व्याख्या पर केन्द्रित थी। हमारी राय में यह पूरी तरह से अनावश्यक है और हमने केवल खारिज किये जाने के तर्को का उल्लेख किया है। एक बार जब योजना ने सुझाव दिया कि इसे राज्य सरकार की "इच्छा"पर छोड दिया गया है, तो "इच्छा"शब्द को अप्राकृतिक अर्थ देने का प्रयास करने का कोई मतलब नहीं होगा। इसी प्रकार "विस्तार" शब्द की व्याख्या में जाने और यह मानने का कोई मतलब नहीं होगा कि एक बार राज्य सरकार ने योजना के एक हिस्से को स्वीकार कर लिया, तो पूरी योजना को भी उसी

रूप में स्वीकार करना होगा, हमारी राय में यह एक अनावश्यक अभ्यास होगा।

17. योजना की स्पष्ट और अस्पष्ट भाषा को देखते हुए, हमारी ओर से किसी भी व्याख्या का प्रयास करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी । उन्ही कारणों से हमे ओपी सिंगला, माणिकलाल मजूदर, चंद्रिकाप्रसाद यादव और डव इन्वेस्टमेंटस के निर्णयों पर आधारित तर्को पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे सभी व्याख्या के सिद्वांतों से संबंधित थे, जिनका अभ्यास हमारे लिए केवल तभी आवश्यक होता जब भाषा अस्पष्ट होती। हमारे लिए डव इन्वेस्टमेंट के मामले पर व्यापक रूप से विचार करना भी आवश्यक नहीं है क्योंकि योजना की स्पष्ट भाषा से ही हम पाते है कि यह राज्य सरकारों के खिलाफ बाध्यकारी होने के अर्थ में एक अनिवार्य योजना नहीं है।

18. इन्ही कारणों से हम यह नहीं समझ पाते कि टीपी जॉर्ज के मामले का निर्णय वर्तमान मामले पर लागू क्यों नहीं है। विद्वान वकील द्वारा एक बहुत ही गम्भीर तर्क उठाया गया कि यशपाल के मामले में निर्णय को खारिज कर दिया गया । हम ऐसा नहीं सोचते। यशपाल का मामला बिल्कुल अलग मुदे पर था वहां विवाद विश्विद्यालयों की संख्या बनाने वाले एक कानून को लेकर था। वहां सवाल यह था कि क्या राज्य सरकार इतने सारे विश्वविद्यालय बना सकती है और क्या ऐसे विश्वविद्यालय

बनाने का कानून एक वैध कानून है, खासकर इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उच्च शिक्षा का विषय सूची 1 की प्रविष्टि 66 के अन्तर्गत आता है। वर्तमान मामले में यह विषय नहीं है यहां एक ऐसा मामला है जहां कोई कानून नहीं है। भले ही हम इस योजना को संविधान के अनुच्छेद 73 के तहत नीति वक्तव्य के उच्च स्तर पर ले जाए, यह योजना स्वयं स्वैच्छिक और बाध्यकारी नहीं होने का सुझाव देती है और यह योजना स्वयं राज्य सरकार को इसे स्वीकार करने या न स्वीकार करने का विवेक देती है। अगर ऐसी बात है तो हम वर्तमान मामले में यशपाल के मामले की प्रासंगिता नजर नहीं आती एक बार जब यह तर्क विफल हो जाता है तो अन्य मामलों का संदर्भ भी अनावश्यक हो जाता है जिनका हमने पहले उल्लेख किया है। हमारी सुविचारित राय में वे सभी मामले राज्य सरकार और केन्द्र सरकार की ओर से शिक्षा के विषय पर विधायी शक्तियों से संबंधित है। वर्तमान मामले में हमारे पास विचार करने के लिए ऐसा कोई कानून नहीं है। जहां योजना स्वयं राज्य सरकार को विवेकाधिकार देती है और जहां राज्य सरकार उस विवेक का उपयोग योजना के एक हिस्से को स्वीकार करने के लिए करती है, न कि पूरी योजना को स्वीकार करने के लिए, यह पूरी तरह से राज्य सरकार की शक्तियों के भीतर होगा कि वह योजना में सेवानिवृति की आयु बढाने के संबंध में दिए गए सुझाव को स्वीकार न करे।

19. विद्वान वकील ने यह भी तर्क दिया कि सेवानिवृति की आयु को

60 या 62 वर्ष तक बढाने की इच्छा, जैसा भी मामला हो पर जोर दिया हम फिर से दोहराते है कि सेवानिवृति की आयु क्या होनी चाहिए, इस बारे में नीति बनाना इस न्यायालय का काम नहीं है क्योंकि ऐसा करने से हम विधान की सीमा के खतरनाक क्षेत्र में फंस जाएगे। यदि राज्य सरकार अपने विवेक से, जो कि योजना के तहत उसे स्वीकार्य है, आयु को प्रतिबंधित करने का निर्णय लेती है और इसे 60 या 62 जैसा भी मामला हो तक नहीं बढाती है तो ऐसा करना पूरी तरह से उचित था।

20. जब हम उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की गई रिट याचिकाओं को देखते है, तो उनमे से कई ने बाद के प्रस्ताव जीओएमएस 208 दिनांक 26.9.1999 को चुनौती भी नहीं दी है। इसलिए, उचित चुनौती देने की जहमत उठाए बिना ही सभी चुनौतियों अव्यवस्थित तरीके से बनाई गई। फिर किसी ने भी उक्त प्रस्ताव की संवैधानिकता को चुनौती नहीं दी कि उक्त जीओएमएस और सूची 1 की प्रविष्टि 66 में शामिल किसी भी केन्द्रीय कानून के बीच कोई टकराव था यशपाल के मामले में जो जांच की जा रही थी वह विशेष रूप से राज्य विधान की वैधता के संबंध में थी, जब यह केन्द्रीय विधान के साथ टकराव में था, यद्यपि इसे समवर्ती सूची की प्रविष्टि 25 में बनाया गया माना जाता था, जो वास्तव में प्रविष्टि को प्रभावी बनाने के लिए समवर्ती सूची की प्रविष्टि 23 तथा केन्द्र सूची की प्रविष्टि 66 के तहत केन्द्र द्वारा बनाए गए सहायक कानून सहित कानून का अतिक्रमण करता है। इस न्यायालय ने इसे शून्य और निष्क्रिय माना

था। चूंकि वर्तमान मामले में कोई वास्तविक या आभासी विरोध नहीं है, इसलिए उक्त जीओएमएस को अमान्य करने का कोई सवाल ही नहीं है, जिसे केवल कुछ रिट याचिकाओं में चुनौती दी गई है। उक्त जीओएमएस के अस्तित्व में आने के बाद भी जिन याचिकाकर्ताओं ने पहलें रिट याचिकाएं दायर की थी, उन्होने कभी भी अपनी रिट याचिकाओं में संशोधन करने की जहमत नहीं उठाई ताकि उक्त जीओएमएस को चुनौती दी जा सके। हालांकि, हम इसे यही छोड देते है, विशेषकर तब जब हमने यह विचार किया है कि किसी भी केन्द्रीय विधान या उसकी नीति और उक्त जीओएमएस या उससे प्रदर्शित राज्य सरकार की नीति के बीच कोई विरोधाभाष नहीं है। यशपाल के मामले में पैरा 33 पर बहुत जोर दिया गया था, उसमे दिए गए प्रस्ताव से हमारा कोई झगडा नहीं है। उस पैराग्राफ में इस न्यायालय ने व्यक्त किया कि विश्वविद्यालय का पूरा दायरा जिसमे शिक्षण, प्रदान की जाने वाली शिक्षा की गुणवता, पाठयक्रम परीक्षा और मूल्यांकन के मानक और साथ ही चल रही अनुसंधान गतिविधि शामिल होगी, राज्य विधानमण्डल के दायरे में नहीं आएगी क्योंकि उच्च शिक्षा या अनुसंधान और वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा के लिए संस्थानों में मानकों के समन्वय और निर्धारण पर विशिष्ट प्रविष्टि संघ सूची में है। जिसके लिए संसद ही सक्षम है। वास्तव में इस प्रस्ताव पर कोई विवाद नहीं हो सकता है, लेकिन पहली बात तो यहां ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह बताए कि संसद ने ऐसे किसी विषय पर कानून बनाया है और राज्य

सरकार का कोई भी कानून संसद द्वारा बनाए गए ऐसे किसी भी कानून के साथ टकराव में है।इसके अलावा दिनांक 27.7.1998 के पत्र से यह स्पष्ट है कि नीति को लागू करना या न करना स्पष्ट रूप से राज्य सरकार के विवेक पर छोड दिया गया है। एक बार जब किसी विरोधाभाष का कोई सवाल ही नहीं है तो हमे नहीं लगता कि इसका टीपी जॉर्ज के मामले को खारिज करने पर कोई प्रभाव पडेगा। आगे, केवल इसलिए कि यशपाल के मामले में टिप्पणियां विश्वविद्यालय के दायरे के बारे में है, इसका मतलब यह नहीं है कि राज्य सरकार सेवानिवृति की आयु तय करने में सक्षम नहीं होगी, खासकर जहां उसके पास ऐसा करने का विवेक है और विधायी शक्तियां भी है। हमे यह जोडने में हिचक नहीं करनी चाहिए कि इन रिट याचिकाओं में किसी भी अधिनियम के किसी भी प्रावधान को चुनौती नहीं दी गई है। मूल रिट याचिकाओं में अपीलकर्ताओं की दलील यह थी कि राज्य सरकार को योजना में यूजीसी सिफारिशों को लागू करना चाहिए और यह उचित रूप से अपोषणीय पाया गया था।

21. संक्षेप में हमारी राय है कि अपीलों में कोई योग्यता नहीं है और इन्हे खारिज कर दिया जाना चाहिए तदनुसार उन्हे खारिज किया जाता है। पक्षकारों को अपनी लागत स्वयं वहन करनी होगी।

अपील खारिज ।

नोटः- यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अनिता टेलर(आर.जे.एस.)द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने की सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवाद किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अग्रेंजी संस्करण ही प्रमाणित होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।